Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

ख़याल गायन के शब्दों में बदलाव तथा प्रयोग विधि-एक समीक्षा

DR. INDRESH MISHRA

Assistent Professor Vocal Music, Department of Performing Arts, Swami Vivekanand Subharti University, Meerut.

सार

बंदिशों का सौन्दर्य तभी कायम रह सकता है जब उसे स्वर, ताल तथा शब्दों के अनुसार ज्यों का त्यों गाया जाय और किसी भी तथ्य पर आये विवाद को हटाने के लिए घरानों में हर वर्ष एक गोष्ठी होनी आवश्यक है जिसमें बंदिशोंके रख-रखाव पर विचार होना चाहिए। साथ ही घरानों के मुख्य गायकों द्वारा बंदिशों को ध्वनिमुद्रित कर विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में सिखाया जाना चाहिए। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन को भी इस विषय पर गंभीरता से चिंतन करना होगा। पारंपरिक बंदिशों को लेकर आज अनेक असंगत प्रवृत्तियों ने संगीत क्षेत्र में पदार्पण किया, जिनके फलस्वरूप अनेक नवीन प्रथाएं आज अपने चर्मोत्कर्ष पर हैं, उनमें से पुरानी बंदिशों के स्थान पर चाहे नयी बंदिशों का बनना हो, अपने अनुरूप लय, ताल शब्दों आदि का बदलना हो या राग, स्वर और कल्पना के अनुसार उसे परिवर्तित करना हो। नवीन प्रयोगों का समावेश करना असंगत नहीं है, परन्तु पारंपरिक धरोहर को नवीन प्रयोगों से काटना अनुचित है। नवीन प्रयोगों के विकास के साथ-साथ असंख्य वर्षों से चली आ रही 'बंदिश' रूपी इस श्रेष्ठ परंपरा को भी संजोकर रखना है जिससे नवीन वाग्गेयकारों के साथ ही सदारंग अदारंग तथा अन्य वाग्गेयकारों की श्रेष्ठ कृतियाँ भी संगीत जगत में प्रकाशमान रहें।

कुंजी शब्द: सदारंग, अदारंग, मोहम्मदशाह रंगीले, बंदिश, घराना

भूमिका

सदारंग अदारंग के युग में कवित्त गायकों में रहीमसेन तानसेन (तृतीय) कासिम अली, शुजात खाँ, अबुल हसन की प्रेयसी, उमाबाई आदि के नाम उल्लेखनीय हैं अर्थात् कवित्त गायन का एक बड़ा क्षेत्र इस समय में देखा जा सकता है। कवित्त एक गेय छंद है रीतिकालीन युग होने के कारण इस समय के गायक-गायिकाएँ ब्रज साहित्य से भलीभाँति परिचित थे।

इसी कारण शायद आचार्य बृहस्पति कहते हैं "मोहम्मदशाह रंगीले के युग तक गायक लोग शब्द और अर्थ के शत्रु नहीं थे। सदारंग जैसे सुशिक्षित व्यक्ति महाकवि देव जैसे आचार्य के शिष्य थे। इस युग का निरक्षर होना गुणी होने का प्रमाण-पत्र नहीं समझा जाता था।" और "सदारंग की मृत्यु के पश्चात् जो गायक रचनाएँ करने लगे उनका साहित्य ज्ञान लगभग शून्य था, अतः पुरानी बंदिशों के बोलों को उलट-पलट कर अपना मसाला प्रस्तुत करने लगे ऐसी बंदिशों में सदारंग का नाम डालना एक सामान्य सी बात हो गयी। अपने अज्ञान को छिपाने के लिए सदारंग की बंदिशों के बोलों को मनमाने रागों में प्रस्तुत करना आरम्भ कर दिया गया।

ख्याल गायन के महत्व को स्वीकार करते ही गीत के शब्दों के अर्थ एवं भावों पर विचार करना अनिवार्य हो जाता है, यहाँ ये कहा जा सकता है कि ऐसे अनेक शब्दों का प्रयोग ख़याल में है जिसका कोई अर्थ निकल कर नहीं आ रहा। स्थाई और अंतरा की पंक्तियों में स्थाई का भाव अलग है और अंतरा का अन्य दूसरा ही अर्थ निकल कर आ रहा है। गायन में शब्द की महत्ता स्वीकार न करने का कुपरिणाम भारतीय संगीत में यह देखा जा रहा है कि अस्पष्ट उच्चारण, उच्चारण भेद की क्रिया में ज्ञानहीनता, अर्थहीन शब्दों का बिना किसी सोच-विचार के प्रयोग और अर्थों से निकलने वाले भावों का हास। इसी त्रुटि ने बंदिशों की सुन्दर बनावट पर जो प्रहार किया है वह किसी से छिपा नहीं है। शनैः-शनै यह प्रक्रिया निरंतर प्रवाह में रही और विभिन्न बंदिशें पदच्युत हो गयीं। निरंतर प्रवाह के मध्य ये त्रुटियाँ तो होती रहीं परन्तु आज उसमें सुधार की आवश्यकता है और शिक्षितों का संगीत क्षेत्र में प्रवेश का यही लाभ है।

राग विभास में सदारंग का प्रचलित बंदिश है "कैसे कुमरवा जाइल हमार"। उसके अनेक ऐसे रूप मिलते हैं जिससे बंदिश के भाव समझने में श्रोता को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। जैसे 'केस कुवंरवा' 'कैसे कुवँरवा' इसके प्रचलित रूप हैं। इसकी स्थाई की

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

पंक्ति इस प्रकार से है "मोरे दरवा नायन घर कल वार रे" (क्र. पु. मा. भाग-6, पृ. 83)। कहीं "तोरे घरवा नैन फरकन वार रे" तथा कहीं "तोरे घरवा नैंन बरखन लाग रे" देखा गया है। इसी प्रकार अंतरे के शब्दों में अंतर है।

जैसे गुर्जरी तोड़ी की बंदिश में "जा जा रे पथिकवा" का जा जा रे पातकवा, पातंग्वा, पाथकवा, पातगवा आदि अंतर पाये जाते हैं। भीमपलासी की बंदिश "जाजा रे अपने मंदिरवा जा" बंदिश के अंतरे में छगनदिया, उगन दिया, ठगन दिया, उगन लिया आदि दोष देखे जा सकते हैं जिसमें छगन शब्द का प्रयोग सही है। "मेवाती घराने के पं. जसराज "का तुम हमसे छलनकिया" इस प्रकार गाते हैं।" "कारे जाने ना दूँगी" को कई गायक "रे जाने न दूँगी" तथा "ऐ जाने ना दूँगी " गाते देखे जा सकते हैं।

पंजाबी रचना "ढोलण मैंडे घर आंबीवे" के स्थान पर "दोलन मेरे घर आयें सोवें "दोलण मैडे घर आमी ये" के अतिरिक्त अन्य देखे जा सकते हैं। ये सदारंग की वे बंदिशें हैं जो अत्यधिक प्रचलित हैं जिनमें अंसख्य दोष पाए हैं। इस तरह की और भी बंदिशें हैं जिनसे ये अंतर आसानी से प्रवेश कर जाते गए हैं। शब्दों का महत्व ख्याल में अधिक है क्योंकि क्रियात्मक अभिव्यक्ति में बोलालाप तथा बोलतान द्वारा उसे व्यक्त किया जाता है। हर आवर्तन पर बार-बार मुखड़ा लेकर शब्द को अधूरा ही छोड़ दिया जाता है तथा दो तीन शब्दों के सहारे ही पूरे विलंबित ख्याल का निर्वाह हो जाता है तथा पूरी बंदिश की शल्य क्रिया हो जाती है। कुछ विलंबित ख़यालों में "हे पग लागन दे" पगला, गन्दे, पगला ला, पग, मुबारकवादियों शदियों तोहे दीनी में मुबारकबा, मुबारकबा, रकबादी, आदि बंदिशों में स्वयं ही बंदिशों का मनोहारी रूप नष्ट ही है और साथ ही इन बंदिशों का अर्थ निकाल पाना नए श्रोताओं के लिए अंसभव हो जाता है। यह दोष अनुचित शब्द-विच्छेद अथवा शब्द-विग्रह के कारण ही होता है।

"पुराने खयाल गायकों या रचनाकारों में से अधिकांशतः आशिक्षित होते थे अतः बंदिश के शब्द सौन्दर्य की ओर उनका ध्यान कम ही रहता था। आचार्य बृहस्पति लिखते हैं "जब गुणियों ने प्रत्येक दृष्टि से खडित और श्रेष्ठ साहित्य रटना-रटाना आरम्भ किया, राग नियमों को अलविदा कह दिया, जब उनका प्रलाप पर्याप्त मात्रा में अहिन्दी भाषी प्रदेशों में बिका। फलतः कुछ मुंबई निवासी प्रतिष्ठित आलोचकों का भी यह मत हो गया कि बंदिशों के साहित्य पक्ष और उसके अर्थ की ओर ध्यादेना अनावश्यक है।

आगरा घराने के पं. यशपाल जी कहते हैं- "पहले समय में शिष्यों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए बहुत दूर-दूर तक जाना पड़ता था अतएव कुछ शिष्यगण वहाँ वर्षों तक साधना करते थे। लिखित या ध्वनि मुद्रण की परंपरा नहीं थी, सीना बसीना तालीम थी जब ये शिक्षा लेकर लौटते थे ढेरों बंदिशें सीखी होती थीं, किसी भी बंदिश का एक शब्द भी दिमाग से निकल गया तो अपना शब्द लगा दिया और बोंदेश में परिवर्तन हो गया।

इस प्रकार शब्दों को हटाने की प्रवृत्ति आजकल बहुत से कलाकारों में है इसके अतिरिक्त कई गायक शब्दोच्चार इतने अस्पष्ट ढंग से करते हैं कि पूर्ण रचना सुनने के पश्चात भी बंदिश के शब्द समझ में नहीं आते। जबकि शब्दों के द्वारा मुख्यतः भावों का सृजन और वहन होता है कुछ गायक शब्दोच्चारण जान बूझकर स्पष्ट करना नहीं चाहते। बंदिश के चुरा लिए जाने के भय से कुछ अंतरा गाते ही नहीं जैसे मारवा में प्रसिद्ध बंदिश, "अरे जग बावरे" का अंतरा अरबी भाषा में है, ना उस्ताद लोग गाना चाहते हैं और ना ही श्रोताओं को समझने में दिलचस्पी है क्योंकि कलाकार को मारवा सुनाने से मतलब है और श्रोताओं को सुनने से"।

निरंतर उन्नति की ओर अग्रसर भारतीय शास्त्रीय संगीत में यह एक चिन्तन का विषय है कि आज संगीत में बंदिशों के साथ जो व्यवहार किया जा रहा है उसके परिणाम अत्यन्त चिंताजनक रूप में हमारी पौराणिक धरोहर पर आघात कर रहे हैं। संगीत सभाओं, गोष्ठियों, आकाशवाणी के विभिन्न कार्यक्रमों आदि में बंदिश में निहित अनेक शब्दों को बदले तथा बिगड़े हुए रूप में सुना जा सकता है जिसका मुख्य कारण है बंदिशों के शब्द सौन्दर्य की ओर से अपना ध्यान हटा लेना। जहाँ एक ओर ये बंदिशें अधिकतर उर्दू, ब्रज, पंजाबी, राजस्थानी आदि भाषाओं में निबद्ध होती हैं वहीं दूसरी ओर भाषा की पूर्ण जानकारी न होने से बंदिशों के शब्दों

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

को जैसे-तैसे मरोड़कर बंदिश का केवल निर्वाह किया जाता है जिससे बारम्बार यही आभास होता है कि राग के प्रस्तुतिकरण के लिए सिर्फ एक दो शब्द ही पर्याप्त हैं जिसे पीटते-पीटते राग का अपनी चरम सीमा तक पहुँचना ही उद्देश्य बन जाता है। शब्दों को निरस्त करने संबंधी यह त्रुटि आज विशेष रूप से देखी जा सकती है। महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल आदि प्रांतों से सम्बन्धित गायकों में भाषा सम्बन्धी यह त्रुटि विशेषतः पाई जाती है क्योंकि ब्रजभाषा तथा अन्य भाषाओं के उच्चारण में पर्याप्त अन्तर रहता है। ब्रजभाषा में अ, आ, इ, ई, ए, ऐ, ओ, ऊ आदि उच्चारण भेद, शब्दों को स्पष्ट रखने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जिनके रहते ब्रज भाषा तथा अन्य भाषाओं के उच्चारण में अन्तर आना कई बार स्वभाविक हो जाता है। "जब सदारंग को 'सदारींग' या 'सदारींगीले', लिखा पढ़ा अथवा सुना जाता है तो बंदिश के प्रति समर्पित संगीतज्ञों के मन का भाव क्या होता होगा इसकी कल्पना नहीं की जा सकती । अहिन्दी प्रान्त से सम्बन्ध रखने वाले गायकों के हिन्दी उच्चारण में प्रांतीय भाषा की खुशबू से बंदिश में कुछ अलग ही छटा उत्पन्न हो जाती है जिससे शनैः-शनैः हिन्दी भाषा के शब्द बंदिश से अपदस्थ होने आरंभ हो जाते हैं। कुछ समय पश्चात् जब दोनों प्रकार के शब्द संगीत जगत में अपना स्थान बना लेते हैं तो संगीत जगत इन दोनों को मिला जुला कर मानने पर आवद्ध हो जाता है। परन्तु साथ ही एक सत्य को टाला नहीं जा सकता कि अनेक स्थलों पर श्रेष्ठ कलाकार कल्पना के वशीभूत होकर कभी-कभी एक दो शब्द गलत या बिगड़े हुए रूप में गा जाते हैं जिससे कई बार उसका परिणाम यह होता है वही शब्द बंदिशों में प्रयुक्त होने आरम्भ हो जाते हैं।

कंठ संगीत से सम्बन्धित प्रत्येक गायन विधा (शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, या सुगम संगीत) में शब्द के मार्ग से ही प्रवेश किया जाता है। विशेषरूप से यदि ख्याल गायकी का ही अवलोकन किया जाय तो उसमें भी शब्दों के माध्यम से ही राग गायन में प्रवेश किया जाता है। जब प्रत्येक गायन में इसका इतना महत्व है तो क्यों स्वीकार्य है, आज भी शब्दों का खूँटियों पर टांगना, क्यों अवश्यंभावी होता जा रहा है शब्दार्थ का खाया जाना, और अगर फिर भी शब्दों को निरस्त करना आवश्यक प्रतीत होता है तो पुरानी सभी बंदिशों के शब्दों को बदलकर उन्हें तराने के बोलों तथा आ, ऊ, ऐ ओ का आधार प्रदान कर देना चाहिए। इधर शब्दों से जिन विभिन्न रखों की या समर्पण आदि भावों की प्राप्ति होती है उन्हें भी परिवर्तन रूपी अंधकार में विलीन कर देना होगा, मिटा देना होगा उन परंपराओं को जिन पर ख्याल गायन आज विद्यमान है। स्वर के मर्म को समझने वाला प्रत्येक साधक, स्वर को अर्चना के रूप में ग्रहण करता है, उसका एक आकार निर्धारित कर उसमें अपने आपको समर्पित करता है जब स्वर में इतनी गहराई है कि वह प्रत्यक्षदर्शी का सर्वस्व हर सकता है, और उधर शब्दों में भी इतना प्रभाव है कि वह युग प्रवर्तक सिद्ध होता है, तो इन दोनों के मेल का परिणाम क्या होगा, यह अनुमान स्वतः ही लगाया जा सकता है।

सदारंग अदारंग की रचनाओं को अठारहवीं शताब्दी में किस प्रकार गाया जाता रहा है, तब से लेकर अब तक उसमें कितना परिवर्तन आया है इस तथ्य की सुनिश्चितता के लिए कोई अकाट्य प्रमाण उपलब्ध नहीं है, यहाँ सिर्फ यही कहा जा सकता है कि समय के अनुरूप प्रत्येक वस्तु में अतंर आना स्वाभाविक है और पिछले कुछ वर्षों में लय के अतिविलंबित प्रकार ने जिस तेजी से ताल के क्षेत्र में पदार्पण किया है उसका प्रभाव लगभग सभी घरानों पर देखा जा सकता है। जब पचास साठ वर्षों में लय में इतना परिवर्तन हुआ है तो मोहम्मदशाह रंगीले के युग से आधुनिक युग तक बंदिशों में कितना अंतर आया होगा, इस पर विचार करना एक क्लिष्ट शोध कार्य को संकेत देता है। अध्ययन से मिले महत्वपूर्ण तथ्यों से यह ज्ञात हुआ है कि जो बंदिश पहले एकताल, तीनताल, तिलवाड़ा, झूमरा, आड़ाचारताल आदि तालों में दो, तीन या चार आवर्तनों में गायी जाती रही, उसी बंदिश को आज जब एक आवर्तन में, एक मात्रा के चार भाग कर गाया जाता है तो उस स्थल पर बंदिश के प्रस्तुतिकरण में निश्चित ही अंतर आता है, और बंदिश अपने पूर्वस्थल से हट जाती है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

सदारंग अदारंग की बंदिशों के साथ भी कुछ ऐसा ही व्यवहार रहा, प्रत्येक घराने ने अपनी-अपनी विशेषताओं या सहूलियत के अनुसार लय-ताल और राग का प्रयोग किया या कहा जाय कि प्रत्येक घराने की गायकी के अनुरूप अपने राग बर्ताव, ताल-लय आदि बाँट लिये। आज बंदिश एक मात्रा के चार विभागों वाली विलंबित लय के एक आवर्तन में गायी जा रही है और जहाँ तक बंदिशों के प्रस्तुतिकरण का प्रश्न है, उसमें दो से चार तक आवर्तन होने से बंदिश का ताल चक्र बंदिश के साथ झाँकता रहता है जिससे वोदेश वास्तव में बंधी हुई प्रतीत होती है मात्राओं और शब्दों में सामंजस्य बना रहता है परन्तु एक-एक मात्रा का यह बाँट बढ़ी हुई लय में ही संभव हो पाता है। चर्चा के दौरान बंदिश के प्रस्तुतिकरण को स्पष्ट करते - हुए श्री एल. के. पंडित जी कहते हैं "हम मात्राओं के हिसाब से बंदिश नहीं गाते बल्कि प्रत्येक बंदिश में आवर्तन का पैमाना रखते हैं और इसी पैमाने के अनुसार बंदिश का निर्वाह करत हैं और उसमें लय को अतिविलंबित नहीं रखते।....

लय परिवर्तन के साथ ही बंदिशों में ताल परिवर्तन का विषय भी आज गंभीरता से देखा जा रहा है जो बंदिशों में परिवर्तन का एक मुख्य घटक रहा है। बंदिशों के तुलनात्मक अध्ययन के फलस्वरूप यह पाया गया कि एक ही बंदिश को विभिन्न घरानों में भिन्न-भिन्न तालों में गाया जा रहा है। इस संदर्भ में अनेक विद्वज्जनों से प्राप्त जानकारी के आधार पर कुछ मत इस प्रकार सामने आते हैं-

(1) एक मत के अनुसार बंदिशों को पूर्ववत तालों के समान ही गाया जाना चाहिए।

(2) कुछ कलाकारों के अनुसार समय परिवर्तन के अनुरूप बंदिशों में परिवर्तन आना स्वाभाविक है।

उपर्युक्त दोनों मत अपने-अपने दृष्टिकोण से सही प्रतीत होते हैं परन्तु साथ ही एक तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि प्रत्येक ताल के वज़न, चलन, खंड आदि में अंतर देखा जा सकता है। परन्तु एक मात्रा के चार भाग करके जब बंदिश को गाया जाता है तो उसमें अधिक अंतर दिखाई देना नहीं चाहिए, क्योंकि एक मात्रा के चार भाग करके तालों में कोई खास अंतर नहीं रह जाता पर साथ ही उसमें एक-एक मात्रा के बॉट का अंतर दिखाई नहीं देता और संभव है कि सम तक पहुँचना ही उसका उद्देश्य बन जाता हो, परन्तु आधुनिक विलंबित में शायद यह एक नवीन प्रयोग है कि एक मात्रा के चार भाग करके किसी भी बंदिश को किसी भी ताल में गाया जा सकता है इसलिए आज बहुधा सोलह, चीदह आदि मात्राओं में निबद्ध बंदिशें अधिकतर बारह मात्राओं में सुनी जा सकती हैं।

रामपुर सहसवान घराने के मुख्य कलाकारों-गुलाम सादिक खाँ, श्रीमती शन्नो खुराना तथा श्री सरफराज़ हुसैन खाँ से मिली विलंबित लय की बंदिशों में एकताल (अड़तालीस मात्राओं) का ही प्रयोग किया गया है। गुलाम सादिक खां कहते हैं कि गुर्जरीतोड़ी की प्रसिद्ध बंदिश "जा जा रे पातगवा" पहले आड़ाचीताल में गायी जाती धी परन्तु यही बंदिश अब अधिकतर एकताल में ही गायी जाती है। ग्वालियर घराने के देशपांडे जी कहते हैं- 'यह बंदिश आड़ाचौताल में ही है परन्तु समय परिवर्तन के साथ मैं भी इसे एकताल में ही गा लेता हूं।'

किराना घराना के पं. भीमसेन जोशी मुख्यतः एकताल तथा तीनताल में ही बंदिशों का निर्वाह करते हैं। बनारस घराना के श्री राजन-साजन मिश्रा लगभग सभी बंदिशों में एकताल का प्रयोग करते सुने जा सकते हैं। आगरा घराना के पं. यशपाल जी अपनी बंदिशें एकताल, त्रिताल तथा तिलवाड़ा आदि तालों में गाते हैं परन्तु इनकी लय आधुनिक विलंबित लय से कुछ बढ़ी हुई हैं। इन्दौर घराना के गायक मुख्यतः झूमरा तथा एकताल का ही प्रयोग करते हैं। दिल्ली घराने में भी मुख्यतः एकताल का ही प्रयोग किया जाता है। ग्वालियर घराने से प्राप्त बंदिशों में सभी तालों का व्यवहार समानरूप से मिलता है, आड़ा-चौताल, तिलवाड़ा, तीनताल, झूमरा, एकताल आदि तालों का प्रयोग इस घराने में देखा जा सकता है। इस घराने से प्राप्त एक भी बंदिश एक आवर्तन में नहीं है, कोई बोंदेश दो तथा कोई बंदिश तीन आवर्तनों में गायी गयी है। जयपुर घराने के स्व. मल्लिकार्जुन मंसूर मध्यलय के ख़्याल ही

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 11, Issue 02, July-December, 2023
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2023

गाया करते थे। ग्वालियर घराने के अतिरिक्त आधुनिक समय अन्य घरानों में अतिविलंबित का ही प्रचलन होता जा रहा है। परन्तु आज भी कुछ बुजुर्ग कलाकार अतिविलंबित लय के खयाल नहीं गाते। अतएव सदारंग अदारंग कृत ऐसी सैकड़ों बंदिशें हैं जिन पर विभिन्न परानों द्वारा स्वर-लय, राग, ताल तथा शब्द आदि के आधार पर कुछ न कुछ अंतर स्थापित हुआ। हालाँकि लगभग 250-300 वर्षों के इस लंबे अंतराल में बंदिश पर विचार एक असंभव कार्य हैं, ना जाने इतनी अवधि में इन वाग्गेयकारों की कितनी बंदिश नष्ट हुई होंगी, कितनी बंदिशों में 'सदारंग अदारंग' का नाम जुड़ा होगा और हटा होगा।

बंदिशों को बचा कर रखने में पं. भातखंडे तथा पं. पलुस्कर जी के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। क्रमिक पुस्तक मालिका, राग विज्ञान, संगीतांजलि आदि पुस्तकों में ऐसी सैकड़ों बंदिशें मिलती हैं जो लिखित रूप में काफी समय तक बचाकर रखी जा सकती हैं। संगीतकला में प्रस्तुतिकरण की दृष्टि से स्वरलिपि पद्धति में गायन की सभी बातें नहीं आ पातीं परन्तु बंदिश की कुछ आकृति तो बचा कर रखी ही जा सकती हैं। अगर भातखंडे व अन्य विद्वज्जनों ने स्वरलिपि पद्धति को ये आयाम न दिया होता तो समय के अंधकार में, संगीत जगत अवश्य ही सदारंग अदारंग की बंदिशों से अनभिज्ञ रह जाता।

बंदिशों का सौन्दर्य तभी कायम रह सकता है जब उसे स्वर, ताल तथा शब्दों के अनुसार ज्यों का त्यों गाया जाय और किसी भी तथ्य पर आये विवाद को हटाने के लिए घरानों में हर वर्ष एक गोष्ठी होनी आवश्यक है जिसमें बंदिशों के रख-रखाव पर विचार होना चाहिए। साथ ही घरानों के मुख्य गायकों द्वारा बंदिशों को ध्वनिमुद्रित कर विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में सिखाया जाना चाहिए। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन को भी इस विषय पर गंभीरता से चिंतन करना होगा। पारंपरिक बंदिशों को लेकर आज अनेक असंगत प्रवृत्तियों ने संगीत क्षेत्र में पदार्पण किया, जिनके फलस्वरूप अनेक नवीन प्रथाएं आज अपने चर्मोत्कर्ष पर हैं, उनमें से पुरानी बंदिशों के स्थान पर चाहे नयी बंदिशों का बनना हो, अपने अनुरूप लय, ताल शब्दों आदि का बदलना हो या राग, स्वर और कल्पना के अनुसार उसे परिवर्तित करना हो। नवीन प्रयोगों का समावेश करना असंगत नहीं है, परन्तु पारंपरिक धरोहर को नवीन प्रयोगों से काटना अनुचित है। नवीन प्रयोगों के विकास के साथ-साथ असंख्य वर्षों से चली आ रही 'बंदिश' रूपी इस श्रेष्ठ परंपरा को भी संजोकर रखना है जिससे नवीन वाग्गेयकारों के साथ ही सदारंग अदारंग तथा अन्य वाग्गेयकारों की श्रेष्ठ कृतियाँ भी संगीत जगत में प्रकाशमान रहें।

निष्कर्ष

जैंसे-जैसे ख़याल की रचनाएँ बनती गयीं वैसे ही ख़याल रचनाओं के आकार तथा भाषा पक्ष में परिवर्तन आरम्भ हो गया। ख़याल की शब्दावली ध्रुपद के शब्दों से भिन्न तथा सरलतर रही। ख़याल शैली की भाषा के अत्यधिक सरल होने के पीछे यह दृष्टिकोण हो सकता है कि यह शैली सामान्य जन के लिए सरल हो और गायन का जो प्रकार सामान्य व्यक्ति में प्रचलित होगा वह स्वयं ही विकसित होगा। इन्हीं परिणामों को समक्ष रख इन्होंने ख़्याल की एक परिचयात्मक भाषा को अंगीकार किया है जिससे इनकी बंदिशें मिश्रित ब्रजभाषा के क्षेत्र में बढ़ती चली गयीं। इनकी बंदिशों में ब्रज की विभिन्न बोलियों का मिश्रण इस प्रकार दिखाई देता है ब्रजभाषा (साहित्यिक) + भोजपुरी + खड़ी बोली + सामान्य हिन्दी इत्यादि । नवीन प्रयोगों के विकास के साथ-साथ असंख्य वर्षों से चली आ रही बंदिश रूप इस श्रेष्ठ परंपरा से संजोग कर रखी गई है तथा संगीत जगत के लिए बहुत बड़ा वरदान साबित हुई है।

सन्दर्भ

1. आचार्य बृहस्पति, 'बंदिश' अर्थात् चीज़ और उसका महत्व, पृ. 20, संगीत सित. 1976
2. H.M.V. S.T.C.S., 04B, No. 3920, 1983
3. आचार्य बृहस्पति- 'बंदिश' अर्थात् चीज़ और उसका महत्व, पृ. 20, संगीत सित. 1976

4. संगीत एवं तलित कला संकाय दिल्ली से प्राप्त रिकार्डिंग के आधार पर
5. कृष्णानंद व्यास, राग कल्पद्रुम, पू. 150
6. वि.वर्धन, राग विज्ञान भाग 2. पृ. 81
7. पं. भातखंडे, क्र. पु. मालिका, पू. 449-449
8. कृष्णानंद व्यास, रागकल्पदुम, पू. 309.
9. Commemoration Vol. in Honour of S.N. Ratanjakar, p. 139
10. पं.वि. रा. वर्धन, राग विज्ञान, भाग 2, पृ. 179
11. पं. भातखंडे, क्र. पु. मालिका, भाग 3, पू. 200
12. H.M.V. S.T.C.S. 04B 7564, 1992
13. पं. एल. के. पंडित जी से साभार प्राप्त 99. कृष्णानंद व्यास, रागकल्पद्रुम, पू. 225
14. पं. वि. रा. पटवर्धन, राग विज्ञान, भाग 2, पू. 150
15. पं. भातखंडे, क्र. पु. मालिका, भाग 4.
16. H.M.V.S.T.C.S., 04B 7278
17. Music Today A, 92031, 1990
18. कृष्णनंद व्यास, रागकल्पदुम, पृ. 155
19. साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी
20. सुधा कुलकर्णी, भारतीय संगीत एवं मनोविज्ञान, पृ. 101
21. पं.भातखंडे, भातखंडे संगीत शास्त्र, भा. 4.पू.6
22. सी. एस. रामलिंगम, (अनु.) रा. द. मोकाशी, कल्पना और संगीत, संगीत कला विहार, अप्रैल,
23. बामनहरि देशपांडे, घरानेदार गायकी, पू. 5 24.कुमार गंधर्व, 'अनूप राग विलास भूमिका, पृ.
25. आचार्य बृहस्पति, मुसलमान, गजल, कव्वाली और ख्याल, पृ.
26. संगीत ख्याल अंक ज. फ. 1976